International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 1; Issue 1; November 2015; Page No. 41-45

संत साहित्य की प्रासंगिकता

नीरजा सिंह

शोधार्थी, हिंदी विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, राजस्थान, भारत।

प्रस्तावना

पाश्चात्य सभ्यता के निरंतर अंधानुकरण ने भारतीय संस्कृति के अस्तित्व को संकट में डाल दिया है। भौतिकवादी विचारों ने भारतीय संस्कारों को अपदस्थ कर दिया है। आधुनिक भारतीयों ने अपने सांस्कृतिक मूल्यों को लगभग विस्मृत कर दिया है। ऐसे भारतीय सामजिक परिवेश मं आज का युवा वर्ग पोषित एवं पल्लवित हो रहा है। आज प्रत्येक युवा ने बड़े–बड़ेक सपने संजोए रखें है। अपने इन्हीं सपनों को पूरा करने की जद्दोजहद में वे निरंतर तनाव, हिंसा, अकेलेपन, नशा, कामुकता एवं क्रोधादि मानसिक विकारों के साथ अपराध की गिरफ्त में आ रहे है। इसका एक बड़ा कारण भारतीय समाह है, क्योंकि यह समाज युवाओं को आगे बढ़ने की प्रेंरणा तो दे देता है परन्तु सफलता का सही मार्ग निर्देशित नहीं कर पाता है। जीवन में सही–गलत, अच्छे–बुरे की पहचान के अभाव में युवा–पीढ़ी भटक जाती है।

हमारे भविष्य के निर्माता आज के युवा–वर्ग को इस भटकाव से बचाना है तो उन्हें भातीय सभ्यता, संस्कृति एवं उसकी समृद्ध परंपराओं से अवगत कराना होगा । युवाओं के मानस में ऐसे भारतीय संस्कारों के बीज बानें होंगे, जिनके सहयोग से वे आज की फर्राटेदार जिन्दगी में अपना संतुलन न खोएँ ।

मध्यकालीन सन्त–काव्य में भारतीय संस्कारों एवं उसकी समृद्ध परंपराओं का अतुल संचय है। निर्गुण संत–साहित्य का प्रभाव देश–काल की सीमा से परे विश्वव्यापी एवं विश्वजनीन है। भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की स्थापना निर्गुण संतो का ध्येय था । संत–काव्य का यही ध्येय आज के भटकते युवाओं को प्रेरणा स्त्रोंत बन सकता है। युवा जीवन को निर्गुण संत काव्य सद्मार्ग की दिशा में ले जा सकता है।

संत कवियों की सुदीर्घ परंपरा में कबीर, दादू, रैदास, सम्प्रदाय के स्वामी रामचरण, दरिया साहब, दयालदास, हरिराम दास आदि प्रमुख रहें है। इन संतो ने अपनी वाणी का स्वानुभूत एवं स्वअर्जित ज्ञान का प्रचार–प्रसार किया । वही ज्ञानोपदेश आज की 21वीं सदी के युवा–जीवन का प्रकाशस्तम्भ बन सकता है। संत दादू के अनुसार आज का युवा इस तरह भ्रमित है। –

'' झूठा साचा करि लिया,विष अमृत जाना।
दुख को सुख कब कोई कहै, ऐसा जगत दिवाना।।''

वर्तमान परिवेश में युवा वर्ग दुख देने वाली वस्तुओं से सुख की आशा का भ्रम पाले हुए है । ऐसे भ्रमित युवा वर्ग को झूठ–सच, विष–अमृत, दुख–सुख की सही पहचान निर्गुण संत काव्य के प्रमुख आदर्शों एवं मान्यताओं से ही प्राप्त हो सकती है। यहाँ मेरा मंतव्य युवाओं को साधु बनाना नहीं अपितु संतो की निम्नांकित स्वभावगत विशेषताओ एवं दृष्टिकोण को अंगीकार करने से है।

समता की भावना – जात–पात पूछे नहिं कोई, हरि को भजै सो हरि को होई ।' स्वामी रामानंद के इन विचारों को आज की युवा–पीढ़ी हृदयंगम कर ले तो भारत धर्म और जाति के नाम पर होने वाले दंगों एवं आतंकवाद जैसी विकराल समस्याओं से मुक्त हो जायेगा। धर्म एवं जातिगत स्वार्थों से उपर उठाकर युवाओं में समस्त मानव समुदाय के प्रति समता की भावना का विकास अतिआवश्यक है। भारत का चहुँमुखी उत्थान युवा समदृष्टि में ही निहित है।

निर्गुण काव्यधारा के कवियों ने जाति–पाँति, ऊँच–नीच का प्रबल विरोध कर समाज मे नई चेतना का संचार किया । उन्होंने समस्त मानव जाति को समानता के धरातल पर देखते हुए मानवता को जो पाठ पढ़ाया वह आज भी प्रासंगिक है।

रामसनेही संत दयालदास ने आत्मा को सदैव अजात माना है–

''आतम सदा अजात है, रमता राम रमाय।''[1]

संत हरिरामदास (रामसनेही) ने भी समस्त मानवजाति को ब्रह्म रूपी एक बंदू से निर्मित माना है–

''एक बूंद का मिड़्या मंडाणां, कुण हींदू कुण मुसलमाणां।
जाति–पांति कारण नहीं कोई, सब ही मैं हरि हेको होई।''[2]

संत कवियों के अग्रदूत कबीर ने राम–रहीम एकता की बात कहते हुए युवाओं को साम्प्रदायिक सोहार्द एवं समानता का संदेष दिया हैः–

''एकै पवन एक ही पाणी, एक जोति संसारा।
एक ही खाक घ़ड़े सब भॉडे, एक ही सिरजन हारा ।''[3]

तथा

जन समदृष्टि शीतल सदा, दुविधा नही आनै।[4]

युग प्रवर्त्तक रविदास ने जाति–पांति के रोग को मानवता का दुश्मन माना है –

''जात पात के फेर मेंहि, उरझि रहइ सब लोग।
मानवता कूं खात हई, रविदास जाति का रोग।''[5]

इसी के साथ संत रविदास ने ऐसे सुराज्य की कल्पना की जहाँ समानता हो सभी को अन्न मिले। ऐसे सुराज्य का स्वप्न आज हर युवा का सोच होना चाहिए–

''ऐसा चाहौं राज हौं जहाँ मिले सबन को अन्न।
छोट बड़ो सभ सम बसै, रविदास रहे प्रसन्न।।''[6]

सत्संगति– निर्गुण संत काव्य में सत्संगति पर बड़ा बल है। यदि आज का युवा वर्ग सत्संगति के महत्त्व को समझ ले, तो जीवन की अनेक समस्याओं से दूर रहेगा। सत्संगति के संबध में लोक में निम्न

उक्ति प्रसिद्ध है –

"सत्संग की तो एक धड़ी, तप के बरस हजार ।
तो भी बराबर ना हुवै, संतों किया विचार ।।"

संत दादूदयाल ने सत्संगति को परमपद की प्राप्ति के समान बताते हुए कहा है कि सत्संगति कभी निष्फल नहीं जाती, उसके अच्छे परिणाम सामने आ ही जाते है–

'दादू नेड़ा परमपद, साधू संगति माहिं ।
छादू सहजै पाइए, कबहूं निरफल नाहिं ।"[7]

निर्गुण संतो ने कुसंग से बचने का आग्रह भी किया है। युवाओं को मूर्ख, दंभी, कामी, मिथ्याभाषी लोगों के संग से बचना चाहिए, ये अपयश और अनंत दोषों के द्वारा होते है। कुसंगति बर्तन मे पड़ी कांजी की भांति है, जो दूधा का नाष कर देती है –

"कुसंगत (में) दुःख अनंत है, सब दोषण को द्वार ।
रामा अवजस मूल है, पय कांजी मिल ख्वार।।"[8]

रामसनेही संत दयालदास ने सत्संगति का महिमागान किया है। जिस तरह पारस के पास रहने से लोहा कंचन बन जाता है, उसी प्रकार सत्संगति से जीवन का स्वरूप बदल जाता ळै –

"लौह पलट कंचन भया, पारस पाया संग।
षट् धातू गुण मिधमता, पलट कनक भये अंग।"[9]

आज के युवा भी सत्संगति में रहेगे तो जीवन में उन्नति के द्वारा खुल जायेंगे अन्यथा कुसंगत में पड़कर वे स्वंय को पतन की ओर ले जायेंगे । वस्तुतः मित्रों का विवेकपूर्णक चयन ही उनके जीवन की दिशा निश्चित करेगा।

संयम, षील एवं संतोष की त्रिवेणी

निर्गुण संतो ने संयम, शील व संतोष का बखान अपनी वाणी में किया है। यदि आज की युवा पीढ़ी इन तीनों के महत्त्व को समझते हुए आत्मसात कर लें तो उनका जवीन सार्थक हो जायेगा।

'संयम' से बड़ी से बड़ी विपत्ति का सामना किया जा सकता है। आज के युवा में संयम नहीं है, वो तुरन्त ही अपना आपा खो बैठता है और उसे अप्रिय स्थितियों का सामना करना पड़ता है। जो युवा संयम के साथ सुख–दुख को एक मानते हुए परिस्थितियों से लड़ता है, वो विजयी होता है।

संत रविदास के अनुसार संयमहीन मानव व्यर्थ में भ्रमित रहता है। जो युवा संयमशील रहता है, वो अमृतपद का भागी बनता है –

"जो बस राखे इन्द्रियां, सुख दुख समझि समान।
सोउ अमरित पद पाइगे, कहैं रविदास बखान।"[10]

संत कबीर कहते है, संयमशील मानव दुख–सुख में धैर्य रखता है एवं आनंद की प्राप्ति करता है–

"दुखिया मूवा दुख कों, सुखिया सुख कौ झूरि।
सदा अनंदी राम के, जिनि सुख दुख मेल्हे दूरि। "[11]

निर्गुण संतो ने 'शील' को मानव जीवन में सर्वोपरि माना है। 'शील' से च्युत युवावर्ग दिशाहीन हो चुका है। शील के पालन से ही युवा अपने जीवन में नैतिक उत्थान लाकर अपने व्यक्तित्व को दृढ़ता प्रदान कर सकते है । संत कबीर ने शील को सभी रत्नों एवं तीनों लोकों की अतुल्य सम्पदा के समान बताया है। उनके अनुसार नैतिक बल ही जीवन में सफलता का मूल है –

"सीलवन्त सबसे बड़ा, सर्व रतन की खानि।
तीन लोक की संपदा, रही सील में आनि।। "[12]

संयम और शील के साथ ही निर्गुण संतो ने संतोष का आचरण भी आवश्यक माना है। संतोष सभी सुखों का आधार है। आज का युवा अत्यधिक महत्त्वाकांक्षी है, वो एक–दुजे की देखा देखी में बड़े–बड़े सपने देखता है और शीघ्र उन्हें असफलता अथवा अपराध की ओर ले जाता है।

निर्गुण संत रविदास ने संतोष व सदाचार को ही जीवन का आधार माना है। संतोष से मनुष्य देवतुल्य बन सकता है–

"सत्त सन्तोष अरू सदाचार जीवन कौ आधार।
रविदास भये नर देवते, जिन तिआगे पंच विकार ।[13]

निर्गुण संत काव्यधारा के चेतनागुरू कबीर ने संतोष को मानव–जीवन का परमावश्यक गुण माना है। 'चाह गई चिंता मिटी, मनुवा बेपरवाह' कहने वाले कबीर युवाओं का अनावश्यक इच्छाओं पर नियंत्रण और तनावमुक्त जीवन जीने का संदेश देते हैं। कबीर अपरिग्रहवादी दृष्टिकोण का परिचय निम्न पंक्तियों में देते है –

"साई इतना दीजिए, जामें कुटुम समाय।
मैं भी भूखा ना रहूँ, साधु ना भूखा जाय।।"

युवा जीवन में संयम, शील एवं संतोष की त्रिवेणी का समागम हो जाए तो वह समाज के लिए प्रेरक उदाहरण बन सकता है। कबीर ने भौतिकवादी परिवेश में भी शील, संतोष द्वारा मानवता का संदेश प्रत्येक युवा को दिया है–

"शील, सन्तोष सदा समदृष्टि, रहनि गहनि में पूरा। ताके दरस परम भ्य भागै, होइ कलेस सब दूरा। ।"

नशा– मुक्तिः– नशा आज के युवा वर्ग के पतन के प्रमुख कारणों में से एक है। नशा, मद्यपान, तम्बाकू धूम्रपान आदि किसी भी रूप में किया जाए, वह घातक है। नशे की गिरफ्त में आने के कारण चाहे शौक, कुसंगत, निराशा अथवा असफलता कुछ भी हों, परिणाम हमारे स्वास्थ्य की क्षति है। आज के युवा को नशे की लत से दूर रहना चाहिए। उन्हें यह याद रखना चाहिए कि नशा शारीरिक तौर पर ही नहीं मानसिक एवं सामाजिक तौर पर भी हमें खोखला कर देता है।

निर्गुण संत कवियों ने मद्यपान के निषेध की बात लबपूर्वक कही है। रामसनेही संत कवि दयालदास ने मद्यपान को दोषपूर्ण एवं नरक–समान माना है। संत दयालदसा ने मात्र सुरापान का नहीं अपितु मांस, तम्बाकू, भांग एवं धूम्रपान का विरोध भी निम्न पंक्तियों में किया है–

ऐ मुख सुरहा पान तें, जुग–जुग नरक सथान।
तंबा भृड्गी श्राप यह, कलजुग को व्रतमान।।"

तथा

"जुग जुग धूमर पान कहों किम जात ऐह अग।।"[14]

रेणा—रामसनही सम्प्रदाय के संतों ने भी मादक द्रव्यों के सेवन को हेय माना है। संत उमाराम ने मदिरा, मांस, तम्बाकू के सेवन को पाप माना हैं और युवाओं को नशें से दूर रहकर सपूत बनने का आग्रह किया है—

"सुरापान और मांस तमाषू ये कह घोर पाप।
इन माय सांसतर में लेष ह कलुकाल क माय, हत्या पाप रे।
हरी हा उम कह सुण लोय जके कपूत रे।।"[15]

सत्य एवं अहिंसा का पालनः—
सत्य सभी धर्मो का आधार है। इसके बावजूद भी वर्तमान युग में सदा सत्य बोलो' का आदर्श वाक्य सर्वाधिक उपेक्षित है। आज की पीढ़ी छोटी—छोटी बातों में भी बेधड़क झूठ बोलती हैं और उनके बड़े इसे नजरअंदाज कर देते है, क्योंकि ये स्वयं भी ऐसा ही करते है। इसी तरह झूठ तरह झूठ बोलना हम सभी की ऐसी आदत बन गई है, जिस पर हमें अफसोस भी नहीं होता । जब एक सच को छूपाने के लिए युवा झूठ की सामाजिक चेतना के अग्रदूत कबीर ने 'सत्य' की महिमा का भान होता है।
सामाजिक चेतना के अग्रदूत कबीर ने 'सत्य' को ईश्वर के समकक्ष माना है। सत्य से बड़ा कोई तप नहीं और झूठ से बड़ा कोई पाप नहीं, ऐसी उनकी मान्यता है—

"साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
जोकि हिरदै साँच है, ताकै हिरदै आप।।[16]

श्रामसनेही संत दयालदास ने 'सत्य' को राम—स्नेह की भांति माना है। युवा—जीवन को उत्तरात्तर श्रेष्ठ बनाने हेतु नैतिक धरातल के निर्माण में सत्य की भूमिका प्रमुख है।

"एक वचन सत बोलिये, जावो तन—मन गेह ।
राम साच न छोडिये, साचा राम—स्नेह।।"[17]

अहिंसा—पालन प्रत्येक धर्म का सार है। निर्गुण काव्यधारा के संतों ने भी अहिंसा के आचरण पर बल दिया हे। अहिंसा ऐसा मार्ग है, जो मानव—कल्याण की ओर जाता है। आज की युवा—पीढ़ी की मनोग्रंथि हिंसात्मक बन गई है। आए दिन पत्र—पखिकओं में हिंसा, हत्या की खबरें आम हो गई है। समस्या कैसी भी हो परन्तु उसका समाधान हिंसा कतइ नहीं है। हिंसा के मार्ग को अपनाकर हम उन्नति के सभी मार्ग बन्द कर देते है। युवाओं के लिए अहिंसा के मार्ग को अपनाने का सरल मार्ग को अपनाने का सरल मार्ग रेण—रामसनही सम्प्रदाय के संत बुधाराम बताते हे कि किसी को भी पीड़ा पहुँचाने से पूर्व स्वपीड़ा का अनुमान हिंसा से आपकों रोकेगा।

"इसी और कै पीड़ जिसी होय आप कै।"[18]

श्रामसनेही संत कवि दयालदास ने अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, क्षमा, धैर्य, आरोग्य, अनुराग को बाह्य तथा आभ्यन्तरिक शुद्धि हेतु आवश्यक माना है। ये सभी मानव—कल्याण के मार्ग हैं, जिनके आचरण में युवा पीढ़ी का उत्थान निहित है—

"उत्तम अहिंसा जानिये, सत अस्तेयह त्याग।
ब्रह्मचरज क्षम्या धृती, आरूजता अनुराग।।"[19]

संत कबीर ने अपनी वाणी में दया को धर्म, लोभ को पान, क्रोध को काल एंव क्षमा को ब्रहम सदृष माना है। दया एवं क्षमा अहिंसा के प्रमुख सोपान है, जिनके अनुसरण से युवा पीढ़ी भारतीय समाज का उद्धार कर सकती है। साम्प्रदायिकता, रक्तपात की घटनाओं के संबंध में यह प्रासंगिक है—

"जहाँ दया तहँ धर्म है, जहाँ लोभ तहँ पाप।
जहाँ क्रोध तहँ काल है, जहाँ क्षमा तहँ आप।।"[20]

नारी के प्रति दृष्टिकोण :— निर्गुण सन्त—काव्य में नारी—साहचर्य का घोर विरोध हुआ है। संतो ने नारी को मुक्ति—मार्ग की बाधा बताया है। वास्तव में संतो का लक्ष्य नारी—निन्दा करना नहीं था अपितु नारी के प्रति कलुशित दृष्टिकोण की निन्दा करना था। नारी को प्रतिव्रता एवं वभिचारिणी दो रूपों में व्यंजित करके संतों ने नारी—चरित्र के प्रति न्याय करने का भी प्रयास किया है।
संत मत के प्रणेता कबीर ने नारी की निन्दा करते हुए उससे बचने की बात कही है, वहीं दूसरी ओर उनके काव्य में नारी—पुरूष समानता का उद्घोष भी है। कबीर के अनुसार नारी भी पुरूष की ही भांति ईश्वर की सृष्टि हे एवं माँ के रू‍ में तो नारी ईश्वर के समकक्ष है—

''हरि जननी मैं बालक तोरा———''[21]
''जेती औरति मरदाँ कहिये सबमें रूप तुम्हारा। "[22]

निर्गुण संत काव्यधारा में रेण—रामसनेही सम्प्रदाय में नारी—विषयक अलग दृष्टिकोण दिखाई पड़ता है। इन संतों ने नारी को सम्मान की अधिकारिणी माना है। रेण—रामसनेही संत दरिया साहब ने नारी को माँ, बहन बेटी के रूप में देखते हुए पूर्ण सम्मान देने का संदेश दिया है। दूसरे उदाहरण में नारी—निन्दकों की भर्त्सना की है—
'नारी आवै प्रीत कर, सतगुरू परसै आण।
दरिया हित उपदेश दे, माय बहिन धी जांग।।''[23]

तथा

''नारी जननी जगत की, पाल पोष दे पोस।
मूरख राम बिसार के, ताहि लगावै दोस।।''[24]

संत बुधाराम ने भी परनारी को माता, बहन, बेटी एवं भाणजी के रूप में देखने की बात कही है—

''प्रनारी कूं माता जाणै, बैहन भांणजी धी ज्यूं पीछाणै।
नष सष सहत मा का जाणै, ओर भाव मन में नहीं आणै।।''[25]

आज की भोगवादी संस्कृति में नारी के प्रति कामजनित दृष्टिकोण ही सर्वत्र विद्यमान हे। आधुनिकता ने नारियों को जहाँ नारी—स्वातंत्र्य, शिक्षा, जागृति प्रदान की है, वहीं नारी पर होने वाले यौन—षोषण की घटनाओं में निरंतर वृद्धि भी की है।
''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः वाली भारत—भूमि पर स्त्रियों की अस्मिता आज तार—तार हो रही हे। आज की युवा—पीढ़ी भी रेण'—रामसनेही सम्प्रदाय के विचारों को जीवन में उतार ले और परनारी को सम्मान की दृष्टि से देखें तो नारी पर होने वालें अत्याचार एवं अपराध नगण्य होंगे। ऐसे में निःसंदेह नारी भी बेखौफ देष की प्रगति में बराबर की भागीदार बनेगी।

प्रेम
'प्रेम असीम एवं अनिर्वचनीय भाव है। निर्गुण संत कवियों ने प्रेम को जीवन का आधार माना है। ईश्वर के प्रति प्रेमानुभुति को ही इन्होंने भक्ति माना। ये संत प्रेम को ईश्वर के ही सदृश दिव्य एवं अनुपम मानते हैं।

कबीरदास ने प्रेम को जीवन का अनिवार्य तत्व माना है–

"जा घट प्रेम ने संचरै, सो घट जान मसान।।"[26]

वर्तमान परिवेश में 'प्रेम' शब्द बेहद सस्ता हो चला है। 'प्रेम' के व्यापक अर्थ को छोड़ भी दिया जाए तो भी लौकिक प्रमानुभूति के भी मापदण्ड आज बदल गए है। आज की व्यापारिक–मानसिकता में प्रेम लेन–देन का व्यापार हो गया है । युवा पीढ़ी ने प्रेम को शरीरी स्तर पर संकीर्णता में ही ग्रहण किया है। अनेक युवाओं के लिए तो प्रेम बदलते फैशन की भांति है। आज के युवा वर्ग की इस सोच में बहुत बड़ा हाथ सिनेमा जगत का भी है।
हालांकिनिर्गुणी संतो का प्रेम अलौकिक था, जिसकी प्रासंगिकता वर्तमान में संभव नहीं है, परन्तु उनके प्रेम की दो विशेषताओं की आज के युवाओं को बेहद आवश्यकता है –1. अनन्य भाव 2. समर्पण भाव । इन दोनों के संयोग से वर्तमान में भी प्रेम औदात्य को प्राप्त कर सकता है।
रामसनेही संत कवि हरिरामदास ने प्रेम के अनन्य भाव का वर्णन किया है। प्रेम 'जल–मछली' की भांति होना चाहिए, जो एक क्षण को भी विलग न रह सकें–

"प्रीत इसी करि जाणीयै, ज्युं जल मछली जोय।
ज्नहरिया तन नीर तै, निमष न न्यारी होय।। "[27]

युगप्रवर्तक कबीर के अनुसार भी प्रेमी को दृढ़व्रती एवं अनन्य होना चाहिए–

"करिए तौ करि जांणियें, सारीषा सूं संग।
लीर लीर लोई थई, तऊ न छाड़ै रंग।।।"[28]

प्रेम को अमूल्य मानते हुए संत कबीर ने प्रेम में समर्पण को आवश्यक माना है। बिना समर्पण के प्रेम अप्राप्य है–

" राम रसाइन प्रेम रस, पीवत अधिक रसाल।
क्बीर पीवण दुरलभ है, मांगै सीस कलाल।"[29]

रामसनेही संत दयालदास ने भी प्रेम में समर्पण भाव की व्यंजना इस प्रकार की है–

"पावण हारा यूं कहै, या का मोल अपार।
सीस करै बगसीस धुर, आपो देह विसार ।।"[30]

युवाओ को संतों के प्रेम विषयक दृष्टिकोण से यह शिक्षा लेनी चाहिये कि प्रेम के भाव त्याग, अनन्यता एवं समर्पण हैं। जहाँ वासना और कामुकता है,वहाँ प्रेम नहीं हैं।

गुरूआदर – "गुरू गोविन्द दून्यूँ खड़े, काके लागूँ पाइ।
बलिहारी गुरू आपणै,गोबिंद दिया दिखाई।।"

संत कबीर ने इन लोकप्रिय पंक्तियों में गुरू को ईश्वर से भी अधिक पूजनीय माना है। उनके अनुसार गुरू ही वो पथ–प्रदर्शक है जो हमें ईश्वर–प्राप्ति का मार्ग बतनाता हैं। 21वीं सदी की युवा–पीढ़ी के विचार कबीर से साम्य नहीं रखते हैं। शिक्षा के बढ़ते व्यवसायीकरण ने गुरू–शिष्य परंपरा को लील लिया हैं। युवाओं में दिनों दिन गुरू अथवा शिक्षक के प्रति आदर की कमी तो आम बात है। विश्वविद्यालयी विद्यार्थी तो शिक्षकों के निरादर एवं उनकी उपेक्षा करनेसे भी नहीं चूकते हैं। ऐसे माहौल में आज के विद्यार्थियों को जीवन में शिक्षक की महती भूमिका याद दिलाना आवश्यक है। आज के युवाओं को यह भी स्वीकार करना होगा कि उनके व्यक्तित्व –निर्माण में शिक्षक की बहेत बड़ी भूमिका है। निगुर्ण संत परंपरा ने सतगुरू के महत्त्व को अपनी वाणी में अभिव्यक्त किया है, जो युवाओं के लिए अनुकरणीय हैं। संत दादूदयाल के अनुसार संतगुरू ही पशु को मनुष्य, मनुष्य को सिद्ध, सिद्ध को देवता एवं देवता को निरंजन बनाने की योग्यता रखता है–

"संतगुरू पसु माणस करै,माणस कैं सिध सोइ।
छादू सिद्ध तैं देवता, देव रिंजन होइ।।"[31]

गुरूनानक जी ने गुरू को 'रत्नाकर' की भांति माना हैं। अनके अनुसार गुरू–कृपा से ही दुर्मति का नाश होता है–

"गुरू सागरो रतनागुरू,तितु रतन घणेरें राम।।"[32]

तथा

"गुरू परसादी दुरमति खोई–"[33]

रेण–रामसनेही संत खेतादास ने गुरू को शिष्य का कर्मरूपी अंधकार मिटाने वाला कहा है–

"गरू सुरज है वेतसी, सबदा कीरण परकास।
क्रम अंधेरा मेट दै,जो सीष लागै पास।।"[34]

निःसन्देह शिक्षक अथवा गुरूही वो पथ–प्रदर्शक है, जो आज के युवा वर्ग को उत्कर्ष की ओर ले जा सकता है। कई सफल युवाओं के अनुभव इसके साक्षी हैं।

पुस्तकीय ज्ञान का व्यावहारिक उपयोग
निर्गुण भक्तिधारा में मात्र पुस्तकीय ज्ञान को असार माना गया हैं। निर्गुणी संत पुस्तकीय ज्ञान के स्थान पर आत्मानुभूति पर अधिक बल देते हैं। उनके अनुसार पुस्तकीय–ज्ञान जब तक आत्मसात न किया जाए, वह व्यर्थ आज के युग में रटी –रटायी विद्या का प्रचलन है। विद्यार्थी पुस्तकीय ज्ञान को सामाजिक दृष्टिकोण से ह्यदयंगम नहीं कर पाते। उनका किताबी ज्ञान केवल किताबोंमें ही सिमट जाता है।

"पोथी पढ़ि –पढ़ि. जुग मुवा, पंडित भया न कोई"

महात्मा कबीर ने प्रचलित पंक्ति में स्पष्ट किया है कि मात्र पुस्तकीय–पाठ से पांडित्य की उपलब्धि नहीं होती। ज्ञान का उद्धेश्य उसे जिह्वागत करने से नहीं अपितु आचरणगत करने से सफल होता है। संत कबीर ने विधिवत कोई शिक्षा ग्रहण नहीं की थी, परन्तु अपने अनुभवसंचित ज्ञानोपदेश से वे आज भी प्रासंगिक है–

" मसि कागद छूओ नहीं, कलम गही नहीं हाथ।
चारों जुग को महात्मा कबीर,मुखहिं जनाई बात।।

रामसनेही संतकवि हरिरामदास ने भी पोथी–पंडितों को सम्बोधित करते हुए कहा है कि ज्ञान तो अहंकारनाषक है परन्तु तुमने तो ज्ञानी होने का ही अहंकार पाल लिया–

" पोथी पढ़ि –पढ़ि जुग ठग्या, पिंडत भया न एक।

अगिलौ बोज ने ऊतरयौ,औरूं बांधि अनेक।।''[35]

रेण– रामसनेही संत दरिया साहब ने भी मात्र पुस्तकीय ज्ञान को मिथ्या कहा है। ऐसा ज्ञान बाहर से उजला और भीतर से काली रात के समान अंधकारमय होता है–

''सीखत ज्ञानी ज्ञान गम, करै ब्रह्म की बात।
दरिया बाहर चाँदना, भतर काली रात।।''[36]

अतएव आज के युवाओं से यही अपेक्षा है कि वे अपने ज्ञान का व्यावहारिक स्तर पर प्रयोग करें। विद्या के इन नए सामाजिक प्रयोगों से जागरूक भारत का निम्रण होगा।
अन्ततः आज की युवा शक्ति देष का भविष्य है, वे देश के कर्णधार है। युवा अपनी ऊर्जा का सकारात्मक प्रयोग करके अपने देश को उन्नति के शिखक पर पहुँचा सकते है। राजनैतिक, आर्थिक, शिक्षा एवं समाज सम्बन्धी समस्याओं का निराकरण कर राष्ट्रोत्थन में सक्रिय भागीदारी निभा सकते है। आवश्यकता है, युवाओं की अकूत ऊर्जा का सकारात्मक दिशा में उपयोग हो । इस कार्य में निर्गुण सन्त काव्य के आदर्ष सहायक सिद्ध होंगे।
निर्गुण सन्त– काव्य के दृष्टिकोण एवं मान्यताओं को आचरण में अपनाकर युवा–वर्ग उज्जवल व्यक्तित्व के स्वामी बनेंगे। स्वामी विवेकानन्द ने कहा है कि उज्जवल व्यक्तित्व का निर्माण कपड़ों से नहीं अपितु चरित्र से होता है। जिस राष्ट्र के युवाओं का चरित्र सत्य, संयम, शिल, संतोष जैसे सद्गुणों से अभिहित हो, वह विश्व में सर्वोच्च होगा। नारी के प्रति सम्मान का भाव एवं समदृष्टि सामाजिक–उत्थान के सोपान बनेंगे। युवाओं द्वारा अहिंसा धर्म के पालन से विश्वशान्ति का प्रसार होगा। युवा–वर्ग की ज्ञानात्मक–शक्ति मानव–कल्याण की पोशक बनेगी। यह बदलाव युवाओं की बदली सोच से ही संभव है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्री दयालुदास जी महाराज की अनुभव वाणी (भाग–1)– संपादक श्री पुरूषोत्तमदास जी महाराज शास्त्री–श्री उत्तम को अंग– छंद संख्या 2, पृ.सं. 228
2. श्रामस्नेही संतकवि हरिरामदास के काव्य का सामाजिक–साहित्यक मूल्यांकन–डॉ. गोपीकिशन चितारा–पृ.सं. 71
3. कबीर ग्रंथावली– संपादक पारसनाथ तिवारी– पद 55
4. कबीर ग्रंथावली– संपादक माताप्रसाद गुप्त– पद 9/2
5. युगप्रवर्तक संत गुरू रविदास– संपादक आचार्य पृथ्वीसिंह आजाद– पृ.सं. 159
6. वहीं– पृ.सं. 165
7. हिन्दी काव्य की निर्गुणधारा– डॉ. पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल– पृ.सं. 159
8. श्री दयालुदास जी महाराज की अनुभव वाणी (भाग–1), अंथ कुसंगत को अंग, छंद संख्या 1, पृ.सं. 302
9. वही–श्री संगत को अंग, छंद संख्या 10, पृ.सं. 306
10. युगप्रवर्तक संत गुरू रविदास– पृ.सं.82
11. कबीर– व्यक्तित्व, कृतित्व एवं सिद्धान्त– डॉ. सरनामसिंह शर्मा – पृ.स. 366
12. हिन्दी काव्य की निर्गुण धारा– पृ.सं. 231
13. युगप्रवर्तक संत गुरू रविदास– पृ.सं. 82
14. रामसनेही संत कवि दयालदास और उनका काव्य– डॉ. गोपीकिशन चितारा–पृ.सं.301
15. रामसनेही संतकाव्यः परम्परा और मूल्यांकन (रेण के विशेष सन्दर्भ में)– डॉ. सतीष कुमार– पृ.सं. 191
16. कबीर समग्र– प्रो. युगेश्वर, पृ.सं. 443
17. श्री दयाजुदासजी महाराज की अनुभव वाणी(भाग–1) –श्री सांच को अंग, छंद सं. 2, पृ.सं. 275
18. श्रामसनेही संतकाव्य– परम्परा और मूल्यांकन (रेण के विशेष संदर्भ में), पृ.सं. 186
19. श्री दयाजुदासजी महाराज की अनुभव वाणी(भाग–1), श्री सांच को अंग, छंद सं. 8 प्र. स. 229
20. कबीर समग्र, पृ.स. 517
21. कबीर– व्यक्तित्व, कृतित्व एवं सिद्धान्त पृ.सं. 651
22. हिन्दी– काव्य की निर्गुणधारा– पृ.सं. 234
23. श्री दरियाव दिव्य वाणी– संपादक यशोराज शास्त्री, उपदेश का अंग, छंद सं. 30 पृ.सं. 313
24. वही– उपदेश का अंग, छंद सं. 31, पृ.सं. 313
25. रामसनेही संतकाव्यः परम्परा और मूल्यांकन (रेण के विशेष सन्दर्भ में) – पृ.सं. 189
26. वही, पृ.सं. 204
27. श्री हरिरामदासजी महाराज की अनुभववाणी, आदि सम्पादक रामरनेही सम्प्रदाय सीथलपीठ के नवामाचार्य श्री 1008 श्री भगवद्दासजी महाराज, अथ मछी को अंग, छंद सं. 1, पृ.सं. 191
28. कबीरः व्यक्तित्व, कृतित्व एवं सिद्धान्त, पृ.सं. 296
29. वही, पृ.सं. 490
30. रामसनेही संत कवि दयालदास और उनका काव्य, पृ.सं. 313
31. संत साहित्य के प्रेरणा स्त्रोत, आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, पृ.सं. 123
32. वही, पृ.सं. 315
33. वही, पृ.सं. 125
34. रामसनेही सन्तकाव्यः परम्परा और मूल्यांकन (रेण के विशेष सन्दर्भ में), पृ.सं. 167
35. कबीर समग्र, पृ.सं. 40
36. श्री हरिरामदास जी महाराज की अनुभव वाणी, अथ चांणिक कौ अंग, छंद सं.2, पृ.सं. 106
37. श्री दरियाव दिव्यवाणी, साध का अंग, छंद सं. 9, पृ.सं. 281